साप्ताहिक

Live not just breaTHE

दि कार्मिक पोस्ट

MPHIN/2015/63220

MP/IDC1528/16-18

Global School Of Excellence, Obedullaganj

वर्ष : 7, अंक : 13 (प्रति बुधवार), इन्दौर, 17 नवंबर से 23 नवंबर 2021 पेज : 8 कीमत : 3 रुपये

सौ महीने से कम समय बाकी, इन वजहों से हो सकती है नतीजे मिलने में दिक्कत...

नई दिल्ली जलवायु परिवर्तन पर संयुक्त राष्ट्र फ्रेमवर्क कन्वेंशन (कॉप-26) के तहत 31 अक्टूबर से 12 नवंबर के बीच चलने वाला 26वां संयुक्त राष्ट्र जलवायु परिवर्तन सम्मेलन अपनी निर्धारित समय-सीमा से एक दिन आगे तक चला। वैश्विक जलवायु संकट से निपटने को अपने प्रयासों मे तेजी लाने के लिए अंततः इसमें ग्लासगो जलवायु समझौता (जीसीपी) पर सहमति बनी।

अंतिम सत्र में 197 देशों द्वारा तैयार जीसीपी में जिन सिद्धांतों का पालन किया गया है, उनका मूल दो शब्दों में निहित है- संतुलित और सहमतिपूर्ण। कॉप-26 के अध्यक्ष आलोक शर्मा ने सदस्य देशों से कहा भी, 'लक्ष्यों को हासिल करने के लिए क्या पर्याप्त है, यह सवाल मेरे बजाय अपने आपसे पूछिए।' जीसीपी का तीसरा प्रस्ताव शनिवार की सुबह जारी किया गया, हालांकि यह पहले से ज्यादा अलग नहीं था। एक के बाद एक सभी देशों से विचार-विमर्श के बाद जलवायु परिवर्तन के संकट से निपटने के प्रयासों में तेजी से आगे बढ़ने के लिए जिस मूलमंत्र पर जो दिया गया, वह था - संतुलित और सहमतिपूर्ण। कोस्टा रिका के प्रतिनिधि के मुताबिक, 'हालांकि हम प्रस्ताव को आदर्श नहीं कह सकते लेकिन यह ऐसा है जिसे अमल में लाया जा सकता है। यह परिपूर्ण समझौता तो नहीं है लेकिन हम इसके साथ चल सकते हैं।' जीसीपी को लेकर ज्यादातर देशों का यही रुख था। जीसीपी का लक्ष्य ग्लोबल वार्मिंग को सीमित करने के लिए 2030 तक धरती के तामपमान को 1.5 डिग्री सेल्सियस बढ़ने से रोकना है, जैसा कि 2015 में पेरिस समझौते में तय हुआ था। यानी जलवायु के विनाशकारी होने से बचने और धरती को जीवन लायक बनाए रखने में अब सौ महीने से भी कम का वक्त बचा है। जीसीपी में आह्वान किया गया कि 2030 तक सभी देशों को ग्रीनहाउस गैसों का उत्सर्जन 45 फीसदी तक कम करना और अंततः पैरिस समझौते के लक्ष्यों को हासिल करने के लिए 2050 तक उत्सर्जन शून्य करना है। निर्णायक जीसीपी के मुताबिक- ग्लासगो जलवायु समझौता यह भी मानता है कि ग्लोबल वार्मिंग को 1.5 डिग्री सेल्सियस तक सीमित करने के लिए वैश्विक ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन में तेजी से, गहरी और निरंतर कमी की जरूरत है, जिसमें 2010 के स्तर के सापेक्ष 2030 तक वैश्विक कार्बन डाइऑक्साइड उत्सर्जन को 45 प्रतिशत तक कम करना और 2050 तक नेट जीरो उत्सर्जन करना शामिल है। इसके साथ ही अन्य ग्रीनहाउस गैसों में भी भारी कमी लाई जाएगी। हालांकि दुनिया इस लक्ष्य को हासिल करने के सही रास्ते पर नहीं है। गैर-लाभकारी संगठन, क्लाईमेट एक्शन ट्रैकर ने अपनी ताजा आकलन रिपोर्ट में पूर्वानुमान लगया है कि उत्सर्जन में कमी के दावों के बावजूद धरती का तापमान 2.4 डिग्री सेल्सियस बढ़ने की आशंका है। किसी भी वैज्ञानिक विश्लेषण के मुताबिक यह एक भयावह स्थिति होगी। जीसीपी ने मानी धीमी प्रगति की बात- ग्लासगो जलवायु समझौता पेरिस समझौते के तहत राष्ट्रीय निर्धारित योगदान (एनडीसी) पर संश्लेषण रिपोर्ट के निष्कर्षों को गंभीरता से ले रहा है। जिसके अनुसार सभी एनडीसी के कार्यान्वयन के आधार पर आकलन किया गया है कि 2030 में कुल ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन स्तर, 2010 से 13.7 फीसदी अधिक होने का अनुमान है। कॉप-26 में यूएनएफसीसीसी के अंतर्गत मुख्यधारा में लाया गया 'नुकसान और हर्जाना' का मुद्दा सबसे विवादित रहा। यह मुद्दा पिछले बीस सालों में छोटे द्वीप वाले देशों के संगठन की इस मांग के बाद जोर पकड़ने लगा है, जिसके मुताबिक, समुद्र का स्तर बढ़ने से उन्हें भारी नुकसान हुआ है, जिसके लिए किवसित देश जिम्मेदार हैं। 'नुकसान और हर्जाना' शब्द का इस्तेमाल यूएनएफसीसीसी के अंतर्गत उस स्थिति के लिए किया जा रहा है, जिसमें मानवजनित जलवायु परिवर्तन से किसी को हानि पहुंचती हो। छोटे द्वीप वाले देशों जैसे असुरक्षित और विकासशील देशों को जलवायु परिवर्तन से होने वाले नुकसान के लिए जवाबदेही और हर्जाने की मांग लंबे समय से उठती रही है। हालांकि सम्मेलन में विकसित देशों ने इसका विरोध किया। यहां तक कि कॉप-26 की शुरुआत में 'नुकसान और हर्जाना' इसके औपचारिक एजेंडे में भी नहीं था। वार्ताकारों ने सम्मेलन में जारी दूसरे मसौदे में एक समर्पित एजेंसी की स्थापना करके पहली बार इस मुद्दे को संबोधित करने का रास्ता तैयार किया। फिर भी मसौदे में जलवायु से जुड़े नुकसान और हर्जाने की भरपाई के लिए एक कोष स्थापित करने की बात को शामिल करने से रोक दिया गया। इस तरह इस मामले में कोई प्रगति नहीं हो सकी, हालांकि विकासशील देश मसौदे के इस प्रारूप से इससे खुश नहीं थे। वे चाहते थे कि विकसित देश उनके द्वारा लाए जलवायु परिवर्तन के कारण हुए नुकसान की, हर्जाना देकर भरपाई करें।

जी-77 के साथ ही चीन समेत 130 देश चाहते थे कि यूएनएफसीसीसी के अंतर्गत ऐसे कोष के निर्माण के लिए 'नुकसान और हर्जाना सुविधा' की स्थापना की जाए। सहमति वाले समझौते में कहा गया- जीसीपी, उन विकासशील देशों में जो जलवायु परिवर्तन के प्रति ज्यादा संवेदनशील हैं, और प्रतिकूल प्रभावों से जुड़े नुकसान को टालने, कम करने के साथ- साथ वहां वित्त, प्रौद्योगिकी हस्तांतरण और क्षमता-निर्माण जैसी कार्रवाई व समर्थन को बढ़ाने की आकस्मिक जरूरत को दोहराता है।

समझौते में विकसित देशों पर जिम्मेदारी भी डाली गई, इसमें कहा गया- जीसीपी, विकसित देशों की पार्टियों, वित्तीय तंत्र की संचालन संस्थाओं, संयुक्त राष्ट्र संस्थाओं, अंतर-सरकारी संगठनों और गैर-सरकारी संगठनों व निजी स्रोतों सहित अन्य द्विपक्षीय और बहुपक्षीय संस्थानों से आग्रह करता है कि वे जलवायु परिवर्तन के प्रतिकूल प्रभाव को झेलने वाले देशों को अतिरिक्त समर्थन दें।

इस मुद्दे पर 'बातचीत' की प्रक्रिया आगे चलती रहेगी, समझौते में कहा गया- जीसीपी ने यह फैसला किया है कि प्रभावित होने वाले देश और अन्य देशों, महत्वपूर्ण संगठनों व साझीदारों के बीच बातचीत की प्रक्रिया जारी रहे। इसमें व तय करें कि जलवायु परिवर्तन से संवेदनशील देशों को होने नुकसान को कैसे कम किया जा सके और उनके हर्जाने का कैसे इंतजाम किया जाए। गैर-लाभकारी संगठन, क्लाईमेट एक्शन नेटवर्क के मोहम्मद एडोव के मुताबिक, 'इस समझौते में तो यह कहा गया है कि समुद्र का स्तर बढ़ने की वजह से अगर आपका घर बर्बाद हो गया है तो अमीर देश केवल नुकसान की जांच करने वाले विशेषज्ञ का भुगतान करेंगे, लेकिन आपका घर दोबारा बनाने के लिए आपको कुछ नहीं देंगे। इस मुद्दे पर बातचीत के लिए विशेष रास्ता निकालने के विचार-विमर्श गहमागहमी से भरे रहे। फिर इस पर सहमति बनी कि अगले सम्मेलन में 'नुकसान और हर्जाने' से संबंधित आर्थिक ढांचे को अंतिम रूप दिया जाएगा। दूसरा विवादित मुद्दा कोयले का उपयोग कम करने और जीवाश्म ईंधनों की सब्सिडी घटाने से जुड़ा था। तीसरे मसौदे के मुताबिक- यह सम्मेलन कम उत्सर्जन वाले ऊर्जा तंत्रों को तैयार करने के लिए सदस्य देशों और पार्टियों से विकास की गति तेज करने, तकनीक स्थापित करने और उसका विस्तार करने के साथ नई नीतियां बनाने का आह्वान करता है। हालांकि पेरिस समझौते में कोयला या गैस जैसे किसी विशेष ऊर्जा स्रो का जिक्र नहीं किया गया था।

साभार

ग्लासगो में भूमिगत ही रहा कृषि मुद्दा

ग्लासको। वन, वित्त और परिवहन जैसे मुद्दों के विपरीत- जिन्हें जलवायु परिवर्तन को लेकर चल रहे संयुक्त राष्ट्र फ्रेमवर्क कन्वेंशन में (कॉप26) पार्टियों के 26वें सम्मेलन में एक दिन का खिताब भी दिया गया, वहां पर कृषि परप्रकृति दिवस के हिस्से के रूप में चर्चा की गई। कार्यक्रम स्थल के बाहर, हजारों लोग कई चीजों का विरोध कर रहे थे जिसमें खाद्य व्यवस्था (प्रणालियों) साथ किया जा रहा सौतेला सा व्यवहार शामिल रहा। लोगों के इस विरोध के मूल में खासकर ग्रीनहाउस गैस (जीएचजी) उत्सर्जन में प्रमुख भूमिका निर्वाह करने वाले प्रमुख स्रोत थे।

अभी तक कॉप26 में जिन दो प्रमुख विषयों शपथ ग्रहण हो चुका था। वे थे, वनों की कटाई पर रोक और मीथेन उत्सर्जन में कटौती। यह अब स्पष्ट हो चुका है कि मीथेन ग्रीनहाउस गैस (जीएचजी) उत्सर्जन में वनों की कटाई और औद्योगिक खाद्य व्यवस्था से काफी गहरे संबंध हैं और इसके उत्सर्जन में इनका काफी योगदान है। यह बात भी निकलकर आई है कि कृषि, वानिकी एवं जमीन का इस्तेमाल विश्व के एक चौथाई ग्रीनहाउस गैस के उत्सर्जन के लिए जिम्मेदार हैं। अंततः प्रकृति दिवस का मनाया जाना इस बात की गवाही रही है कि विश्व के 45 राष्ट्र %सतत कृषि नीति कार्य एजेंडा% सस्टेनेबल एग्रीकल्चर एंड एवं ग्लोबल एक्शन फॉर इनोवेशन इन एग्रीकल्चर (अर्थात सतत कृषि हेतु वैश्विक स्तर पर कृषि कार्य नीति में) नवाचार के साथ बदलाव के पक्ष में हैं। दूसरे शब्दों में इसे कार्य नीति एजेंडा भी कहा जाता है। ग्रीनहाउस गैस के उत्सर्जन में कमी लाने के लिए स्विट्जरलैंड, नाइजीरिया, स्पेन और संयुक्त अरब अमीरात जैसे प्रभावशाली देशों ने शपथपत्र पर हस्ताक्षर कर अपनी प्रतिबद्धता जता चुके हैं। इन देशों का कृषि से होने वाले कुल ग्रीन हाउस गैस उत्सर्जन में 10 प्रतिशत हिस्सेदारी है। इसलिए शपथपत्र में स्पष्ट रूप से उल्लेख कर दिया है कि - शपथ लेने वाले को -प्राकृतिक वातावरण की रक्षा करना होगा और कृषि से होने वाले उत्सर्जन कम करने के लिए वह संघर्ष करेगा। इसको देखते हुए यूनाइटेड किंगडम की सरकार ने भी यह घोषणा कर दी है कि हस्ताक्षरकर्ता देश इस बात से सहमत हैं कि - +प्रकृति की रक्षा करने के लिए हमें और निवेश करना होगा और सतत व स्थायी खेती करने हेतु हमें और अधिक सुदृढ़ तरीके खोजने होंगें और उसमें आवश्यक बदलाव भी करना पड़ेगा। 26 देशों ने और अधिक स्थायी खेती तथा उसे कम प्रदूषणकारी बनाने के लिए अपनी कृषि नीतियों में आवश्यक बदलाव करने के लिए प्रतिबद्धता जताई है। उन्होंने इस बात की भी घोषणा की है कि सतत कृषि और खाद्य आपूर्ति व्यवस्था बनाए रखने तथा उसे जलवायु परिवर्तन के हानिकारक प्रभाव से बचाए रखने विज्ञान के क्षेत्र में और अधिक निवेश करेंगें। इससे संबंधित प्रेस वक्तव्य में यह कहा गया है कि कृषि में नवाचार हेतु सार्वजनिक क्षेत्र में 4 अरब डॉलर (लगभग 30,000 करोड़ रुपये) का निवेश किया जाएगा। कॉप 26 के अध्यक्ष आलोक शर्मा ने कहा, +प्रतिबद्धताओं से पता चलता है कि पेरिस समझौते के लक्ष्यों को पूरा करने के लिए प्रकृति और भूमि उपयोग को आवश्यक माना जा रहा है, और यह जलवायु परिवर्तन और जैव विविधता के नुकसान के दोहरे संकटों को दूर करने में योगदान देगा। इस साल 23 सितंबर को संयुक्त राष्ट्र खाद्य प्रणाली शिखर सम्मेलन से पहले, इनसे जुड़ी हुई एजेंसियों ने उन किसानों को मिल रहे वैश्विक समर्थन की व्यापक समीक्षा करने की बात कही जिसके कारण यह ग्रह गर्म होते जा रहा है। इस बात की भी चर्चा हुई कि कैसे इसे 2030 तक सतत विकास लक्ष्यों (एसडीजी) को प्राप्त करने से भी दूर रखा जा रहा है। अधिकांश समर्थन ऐसे क्षेत्रों से आ रहे हैं जो ग्रीनहाउस गैसों का उत्सर्जन-करने में काफी आगे हैं और पर्यावरण के दुश्मन हैं। इंटरनेशनल फूड पॉलिसी रिसर्च इंस्टीट्यूट के सीनियर रिसर्च फेलो जोसेफ ग्लौबर ने कहा - उदाहरण के तौर पर- बीफ उत्पादन वाले क्षेत्र को भारी समर्थन मिला है ता है ताज्जुब की बात यह है कि जीएचजी का भी अत्यधिक उत्सर्जन यही करते हैं। अत यहां पर समर्थन कम करने की आवश्यकता है। मूल रूप से, समर्थन प्रणाली का उद्देश्य को पुनःभाषित एवं पुनर्व्यवस्थित करने की आवश्यकता है। उदाहरण के लिए, उच्च आय वाले देशों को - अपने बड़े मांस और डेयरी उद्योगों के लिए बड़े पैमाने पर मिलने वाले समर्थन को स्थानांतरित करने की आवश्यकता है -क्योंकि आकंड़े के मुताबिक ये वैश्विक ग्रीन हाउस गैस उत्सर्जन में इनकी हिस्सेदार 14.5 प्रतिशत है। और अगर पेरिस समझौते के लक्ष्यों को पूरा करना है तो ऐसा करना पड़ेगा।

खाद्य प्रणालियों में परिवर्तनकारी परिवर्तन लाने के लिए वचन लेने वाले प्रभावी देशों से काफी अपेक्षाएं थीं। पर बजाय इस क्षेत्र में प्रभावी कदम उठाने के जानबूझकर कृषि व्यवस्था को खाद्यय पदार्थ व उपभोग में आने वाली व्यवस्था बताकर इससे जुड़े हुए मुद्दों को जानबूझकर दफन कर दिया गया।

हस्ताक्षर किए गए शपथ पत्र पर +मांस की खपत+ जैसे शब्दों का उल्लेख नहीं था। द गार्जियन दैनिक को दिए एक साक्षात्कार में, संयुक्त राज्य अमेरिका के कृषि सचिव थॉमस विल्सैक ने कहा-

मुझे नहीं लगता कि मुद्दा यह है कि हमें अमेरिका में उत्पादित मांस या पशुधन की मात्रा को कम करना है। क्योंकि यहा जो उत्पादन होता है उसका एक एक महत्वपूर्ण प्रतिशत निर्यात किया जाता है। यहां अधिक या कम खाने या अधिक या कम उत्पादन करने का प्रश्न ही नहीं है।सवाल है उत्पादन को कैसे सतत बनाए रखा जाए ।

स्लो फूड यूरोप के निदेशक मार्टा मेसा ने कहा- प्राकृतिक पर्यावरण के अनुरूप ही कृषि पारिस्थितिकी तंत्र को पुनर्बहाली किया जाना चाहिए। तकनीकी सुधार एक झूठे समाधान हैं, वे उन वास्तविक नवाचारों पर आधारित नहीं हैं जिन्हें समुदाय लचीला होने के लिए लेकर आते हैं। तकनीकी सुधार व मरम्मत एक झूठे समाधान हैं, जो उन वास्तविक नवाचारों पर आधारित नहीं हैं जो कि समुदायों के लंबें अनुभव व प्रयोगों के परिणाम से आते हैं। हमें उम्मीद है कि कॉप26 का समापन बजाए हवाई वायदों के ठोस, आवश्यक एवं बंधनकारी प्रतिबद्धताओं के साथ होगी।

कृषि 1995 के यूएनएफसीसीसी समझौते का हिस्सा था, लेकिन यह चर्चा में 2011 में ही आया। 2017 में कॉप23 का परिणाम था कृषि पर कोरोनिविया संयुक्त कार्य (केजेडब्ल्यूए)। जिसे आज भी इस क्षेत्र में एक मील का पत्थर माना जाता है। इसने जलवायु परिवर्तन से निपटने में कृषि की भूमिका पर प्रकाश डाला और उसे स्वीकार भी किया गया। यूएनएफसीसीसी के तहत एकमात्र कार्यक्रम है जो कि कृषि और खाद्य सुरक्षा पर केंद्रित है। केजेडब्ल्यूए ने कॉप26 में कुछ कार्यक्रम आयोजित किए, लेकिन हमेशा की तरह इसकी आवाज और दृश्यता दब गई।

आदिवासियों पर दर्ज प्रकरण वापस लेगी मध्य प्रदेश सरकार - शिवराज सिंह चौहान

भोपाल। जनजातीय महासम्मेलन में अपने संबोधन में मध्य प्रदेश के मुख्यमंत्री शिवराज सिंह चौहान ने एलान किया कि जनजातीय समुदाय पर दर्ज छोटे प्रकरण वापस लिए जाएंगे। ग्रामसभाओं को अधिक अधिकार देकर सशक्त बनाया जाएगा। राशन आपके द्वार योजना के तहत प्रधानमंत्री जो राशन देते हैं उसे गांव-गांव भेजा जाएगा। गाड़ी भी सरकार की नहीं आदिवासी नौजवान की होगी। बैंक से सरकार अपनी गारंटी पर ऋण प्रकरण स्वीकृत कराएगी। 37 लाख व्यक्तियों को राशन के लिए पात्रता पर्ची दी है। मोदी राज में कोई गरीब भूखा नहीं सोएगा। प्रधानमंत्री आवास योजना के तहत आवास दिए जा रहे हैं पर परिवार बड़ा होने से समस्या आ रही थी। इसे देखते हुए मुख्यमंत्री भू-आवासीय अधिकार योजना बनाई है। इसमें निशुल्?क भूखंड दिए जाएंगे। कांग्रेस ने तो कभी स्कूल, सड़क बनाई नहीं है। बिजली भी हम गांव-गांव तक पहुंचा रहे हैं।

कार्बनीकरण से मुक्ति से नफा और नुकसान

भारतीय अर्थव्यवस्था को कार्बनीकरण से मुक्त करने की प्रक्रिया के चलते आने वाले दशक में अर्थव्यवस्था के विभिन्न क्षेत्रों में भारी लाभ और हानि जैसी स्थितियां निर्मित होंगी। अतीत या भविष्य के तकनीकी बदलाव के अन्य तत्वों से तुलना की जाए तो इसमें कुछ भी आश्चर्यजनक नहीं है। ये बदलाव वित्तीय निवेशकों तथा गैर वित्तीय कंपनियों की नेतृत्व टीमों की रणनीतिक सोच की दृष्टि से महत्वपूर्ण हैं। सार्वजनिक क्षेत्र के सामने फिलहाल वैसे ही हालात हैं जैसे सन 1990 के दशक में दूरसंचार क्षेत्र के सामने थे। सार्वजनिक नीति की दुनिया में हमें कोयला खनन करने वालों और बिगड़ते भू स्तर में सुधार के बारे में विचार करना होगा।

किसी तय तारीख का जिक्र तो नहीं किया जा सकता है लेकिन एक दिन ऐसा आएगा जब देश में न केवल कोयला खनन बल्कि कच्चे तेल का अधिकांश उत्पादन और प्रसंस्करण भी बंद हो जाएगा। इसके अलावा नवीकरणीय ऊर्जा तथा उसकी भंडारण क्षमताओं में भी जमकर इजाफा होगा। ये बड़े उद्योग हैं और इनका असर भी समूची अर्थव्यवस्था में महसूस किया जाएगा। इस आलेख को पढ़ने वाले सभी पाठकों की बात करें तो हमारी आपकी दुनिया में अनेक ऐसे लोग और संस्थान हैं जो इस बदलाव से प्रभावित होने जा रहे हैं। ऐसे तकनीकी बदलाव नए नहीं हैं। समय के आरंभ से ही ऐसा होता आ रहा है। हर दशक में हमने उत्पादन में बड़े ढांचागत बदलाव देखे और हर अवसर पर कुछ लोग लाभान्वित हुए तो कुछ को नुकसान हुआ। जब स्वेज नहर बन रही थी और बंदरगाहों का यातायात कलकत्ता से बंबई स्थानांतरित हो गया था तो यह कलकत्ता के लिए बहुत मुश्किल वक्त था। मशीनीकरण, स्वचालन तथा उपभोक्ताओं की पसंद में बदलाव आदि ने बार-बार ऐसे हजारों उद्योगों को बनाया और बिगाड़ा है जिनसे लाखों लोग जुड़े हुए थे। युद्ध के दौरान होने वाले उत्पादन ने 100 गुना तक वृद्धि हासिल की और फिर वे विलुप्त हो गए। एक सफल देश के लिए जरूरी बात यह है कि वह बदलाव की राह रोकने और उसे लेकर शिकायत करने के बजाय बड़े रुझानों के बारे में पहले से अनुमान लगाए और समुचित प्रतिक्रिया दे। पेशेवर कर्जदाता और निवेशक ही कार्बन के गहन इस्तेमाल वाले बनाम कार्बन के परे भविष्य पर अटकल भरे दांव लगा रहे हैं। आशावादी नवीकरणीय ऊर्जा पर दांव लगा रहे हैं और ऐसे भी लोग होंगे जो कोल इंडिया के शेयर खरीद रहे हैं। भारत के कार्बनीकरण से मुक्ति की धीमी या तेज गति के अनुसार ही इनका मुनाफा या हानि पैदा होगी। तकनीकी बदलावों के दौरान ऐसा होता ही है। उदाहरण के लिए जब आईटी की स्थिति में सुधार हुआ तो आशावादी आधुनिक बैंकों पर दांव लगा रहे थे जबकि पुरातनपंथी लोगों का दांव उन बैंकों पर था कर्मचारियों की तादाद बनाए रखना चाहते थे। घटनाक्रम कैसे आगे बढ़ता है, इसी से तय होगा कि किसे फायदा होगा और किसे नुकसान। पेशेवर वित्तीय कारोबारियों का बचाव करना सार्वजनिक नीति के विचार का विषय नहीं है- यह हर पेशेवर का काम है कि वह वैश्विक स्तर पर कार्बनीकरण से मुक्ति की प्रक्रिया पर नजर रखे और इस बात पर विचार करे कि उनके मुताबिक भारत में चीजें किस प्रकार घटित होंगी। अच्छी बात यह है कि देश के वित्तीय बाजार के वैश्विक अर्थव्यवस्था में एकीकरण के कारण पेशेवर पूंजी का बड़ा हिस्सा देश के बाहर का है। ऐसे में हम भारतीय %अंतरराष्ट्रीय साझा जोखिम% के लाभार्थी हैं। इस सफर में मील का एक अहम पत्थर वह दिन होगा जब कोई वितरण कंपनी किसी ताप बिजली घर को कानूनी पत्र भेजकर पीपीए को समयपूर्व समाप्त करने की बात कहे। यहां ताप बिजली घर को अनुबंध कानून का बचाव हासिल होगा और वितरण कंपनी को अनुबंध समाप्त करने के लिए धनराशि चुकानी होगी। ताप बिजली घर को यह योजना तैयार करनी होगी कि वह अपनी परिसंपत्तियों का नकदीकरण और कर्मचारियों की विदाई कैसे करेगा। कई लोग जो जीवाश्म ईंधन की चरणबद्ध विदाई से नकारात्मक रूप से प्रभावित होंगे वे सरकारी सहायता की मांग करेंगे। ज्यादातर मामलों में सही उत्तर यही होगा कि इसे नकार दिया जाए। तकनीकी बदलाव सामान्य कारोबारी जोखिम का हिस्सा हैं और कारोबारी दुनिया और वित्तीय जगत ऐसे ही चलता है। इस विषय में पहले से पर्याप्त चेतावनी दी जाती रही है। देश के बिजली तंत्र में सरकारी स्वामित्व और केंद्रीय नियोजन के चरम को महसूस किया जा सकता है। देश के बिजली तंत्र की मौजूदा स्थिति तथा सन 1995 के सरकारी स्वामित्व वाले दूरसंचार क्षेत्र की स्थिति में समानता देखी जा सकती है। सन 1995 में भारत सरकार के पास दूरसंचार सेवा प्रावधान के रूप में सार्थक परिसंपत्ति थी। हम जानते हैं कि उस वक्त सबसे अच्छी नीति यही थी कि इन संपत्तियों को समुचित मूल्य पर बेच दिया जाए और फिर निजी खरीदारों को आने वाले तकनीकी बदलाव से जूझने दिया जाए। निजी खरीदार को सभी उपकरण कबाड़ में बेचने पड़ते और श्रम शक्ति को सीमित करना पड़ता। एक छोटे हिस्से में निजीकरण किया गया और वीएसएनएल को बेच दिया गया। तत्कालीन दूरसंचार प्रतिष्ठान निजीकरण को रोकने में सक्षम नहीं था इसलिए देश की दूरसंचार परिसंपत्तियों के मूल्यांकन में तेज गिरावट आई। बिजली क्षेत्र में वैसी ही स्थितियों की कल्पना की जा सकती है। आज हमारे देश में जीवाश्म ईंधन उद्योग में ऐसे उद्योग, वितरण, परिषण और उत्पादन क्षमताएं हैं जिन्हें बेचा जा सकता है। एक बड़ा बदलाव आसन्न है जिसके आगमन के बाद ताप और गैस आधारित परिसंपत्तियां बंद होंगी और नवीकरणीय ऊर्जा की ओर रुख किया जाएगा। ग्रिड में तकनीकी बदलाव आएगा और नवीकरणीय ऊर्जा उत्पादन का विकेंद्रीकरण होगा। राज्य क्षमता की सीमाओं को देखते हुए भारतीय राज्य ढांचा इस बदलाव में वैसा ही प्रदर्शन करेगा जैसा उसने एमटीएनएल और बीएसएनएल के मामले में किया। निजी निवेशक स्वयं रुचि लेते हैं और वे सक्षम होते हैं। वे अपने कदम समुचित तरीके से उठाएंगे। बतौर निवेशक भारतीय राज्य उनकी बराबरी नहीं कर सकेगा। बिक्री में देरी से संपत्ति का मूल्य कम होगा। इस बीच भारतीय राज्य की प्रतिक्रिया देने में कमजोरी नागरिकों पर लाग थोपेगी। एक क्षेत्र ऐसा है जहां सरकारी नकदी और प्रबंधन के जरिये ही कार्बनीकरण से मुक्ति की दिशा में बढ़ा जा सकता है और वह है कोयला खदानें। एक बार खदानें बंद हो जाने के बाद संबद्ध प्रबंधन ढांचे में अहम संसाधन लगाने होंगे ताकि खराब हुई जमीन को वनों एवं पारिस्थितिकी पर्यावरण के अनुकूल बनाया जा सके। यह सार्वजनिक संसाधनों को लेकर एक समुचित दावा होगा।

भारत में आधे से अधिक फसलों की किस्मों पर मंडराया विलुप्त होने का खतरा- अध्ययन

मुंबई। दुनिया भर में खाद्य और पोषण सुरक्षा के साथ-साथ लाखों लोगों की आजीविका के लिए अलग-अलग तरह की फसलें बहुत महत्वपूर्ण हैं। फसलों की इस विविधता में कई अलग-अलग तरह की प्रजातियां और किसानों द्वारा उगाई जाने वाली किस्में शामिल हैं। जिनमें से कई किस्मों को किसानों और स्वदेशी लोगों द्वारा सालों से संरक्षित किया जा रहा है। फसलों के हर किस्म में अनोखे आनुवंशिक लक्षण होते हैं। जो प्रजनको और किसानों को जलवायु परिवर्तन अनुकूलन और शमन जैसी तत्काल वैश्विक चुनौतियों का सामना करने में मदद करते हैं। हमारी खाद्य प्रणालियों को बदलते जलवायु के अनुसार ढलने में मदद कर सकते हैं, वर्तमान और भविष्य में अपनी भूमिका निभा सकते हैं।

हालांकि इस बात को स्वीकारा गया है कि इनमें से कई फसलें और किस्में गंभीर दर से नष्ट हो रही हैं। लेकिन जब यह पता चलता है कि हमने कितनी किस्मों को खो दिया है और यह कौन सी फसलें और उनकी किस्में हैं, यह जानने के लिए आंकड़ों का अभाव है। यह सब देश, क्षेत्रीय और वैश्विक स्तर पर कृषि जैव विविधता की निगरानी के लिए स्थापित अंतरराष्ट्रीय ढांचे के लिए एक चुनौती पेश करते हैं। जिसके कारण संरक्षण और जागरूकता बढ़ाने के प्रयासों में रुकावट आती है। अब एक ऐसी पद्धति विकसित की गई है जो इन आंकड़ों की कमी को पाटने में मदद कर सकती है। एलायंस ऑफ बायोवर्सिटी इंटरनेशनल और सीआईएटी द्वारा विकसित, भागीदारों के साथ काम करते हुए, वैराइटल थ्रेट इंडेक्स - खेत पर, क्षेत्रों के बीच और समय के साथ विविधता में परिवर्तनों की निगरानी के लिए एक व्यवस्थित तरीका प्रस्तावित करता है। जोकि स्थानीय कृषि जैव विविधता के बारे में किसानों से जानकारी को इकट्ठा करने के लिए एक त्वरित मूल्यांकन तकनीक का उपयोग करता है। जिसमें किसानों की जानकारी और उन्नत किस्मों दोनों के बारे में पता लगाए गए प्रत्येक फसल और किस्म के लिए खतरे के स्तर की पहचान और गणना करने के लिए चार-कोशिका मूल्यांकन पद्धति शामिल की गई हैं। अध्ययन में भारत के सात राज्यों के लगभग 600 किसानों ने पांच अलग-अलग कृषि क्षेत्रों से भाग लिया। लिंग, जातीयता और जाति के मिश्रण का प्रतिनिधित्व करने वाले किसानों को 17 अध्ययन स्थलों में फसलों और किस्मों के बारे में उनके ज्ञान के आधार पर चुना गया था। उनमें से प्रत्येक ने अपने घर में उगाई जाने वाली फसलों और किस्मों को सूचीबद्ध किया, उनके उपयोगों को लिखा गया। जिसमें पिछले दस वर्षों के दौरान उगाई गई किस्मों की जानकारी भी शामिल थी जो अब उगाई नहीं जाती है।परिणामों से पता चला कि अध्ययन स्थलों के अंदर विशेष रूप से मध्य और पश्चिमी क्षेत्रों में उगाई जाने वाली किस्मों में एक महत्वपूर्ण विविधता पाई जाती है, जिनमें से 50 फीसदी से अधिक किस्मों पर खतरा मंडरा रहा है। रुझानों से पता चला है कि जिन फसलों और किस्मों का उपयोग ज्यादातर उपभोग के लिए किया जाता है, उन्हें अक्सर खतरे के रूप में वर्गीकृत किया जाता है। जबकि बिक्री और चारे के साथ-साथ घरेलू भोजन जैसे कई उपयोगों वाली किस्मों को कम खतरे के रूप में वर्गीकृत किए जाने की संभावना कम थी। कम से कम 76 फीसदी या उससे अधिक भू-प्रजातियों को असुरक्षित, निकट संकटग्रस्त, संकटग्रस्त, या उनके नुकसान होने की सूचना दी गई। जबकि कम से कम खतरे वाली किस्मों को मुख्य रूप से सुधार या जारी की गई किस्मों के रूप में दर्ज किया गया।चूंकि 2020 के बाद के वैश्विक जैव विविधता ढांचे के तहत प्रगति को मापने और संरक्षण रणनीतियों को आगे बढ़ाने के प्रयासों में तेजी आई है। इस तरह की जानकारी संयुक्त राष्ट्र के खाद्य और कृषि संगठन (एफएओ) और जैव विविधता सम्मेलन के सचिवालय (सीबीडी) द्वारा वैश्विक प्रयासों को आगे बढ़ाने में मदद कर सकती है। खाद्य और कृषि के लिए वनस्पति आनुवंशिक संसाधनों की वैश्विक स्थिति की निगरानी के लिए लक्ष्य और संकेतक विकसित करना, जिसमें कृषि फसल और विविधता को मापने और निगरानी करने के लिए अंतरराष्ट्रीय स्तर पर सहमती के सूचक शामिल हैं। भारत के पांच अलग-अलग कृषि-पारिस्थितिकी क्षेत्रों में 50 फीसदी से अधिक भू-प्रजातियों को खतरे में माना जाता है। यह जानने के बाद कि कौन से सबसे अधिक खतरे में हैं, लोगों को खाद्य प्रणालियों को बदलने और जीवन में सुधार करने के लिए आवश्यक विकल्प देने हेतु तत्काल संरक्षण कार्यों को करने में मदद मिलेगी। यह अध्ययन एमडीपीआई नामक पत्रिका में प्रकाशित हुआ है।

कार्बन को जमीन में बनाए रखने में मदद करते हैं मिट्टी के सूक्ष्मजीव

मुंबई। पृथ्वी पर सबसे अधिक स्थलीय कार्बन अवशोषित करने में मिट्टी की अहम भूमिका है। कई वैज्ञानिकों को इस बात का डर है कि गर्म होती मिट्टी कार्बन के महत्वपूर्ण हिस्से को मुक्त कर देगी। इसे कार्बन डाइऑक्साइड (सीओ2) गैस में बदल देगा जिससे धरती के गर्म होने की गति और तेज हो जाएगी। इस कहानी के प्रमुख खिलाड़ियों में से एक अदृश्य सूक्ष्म जीव भी इसमें शामिल हैं।

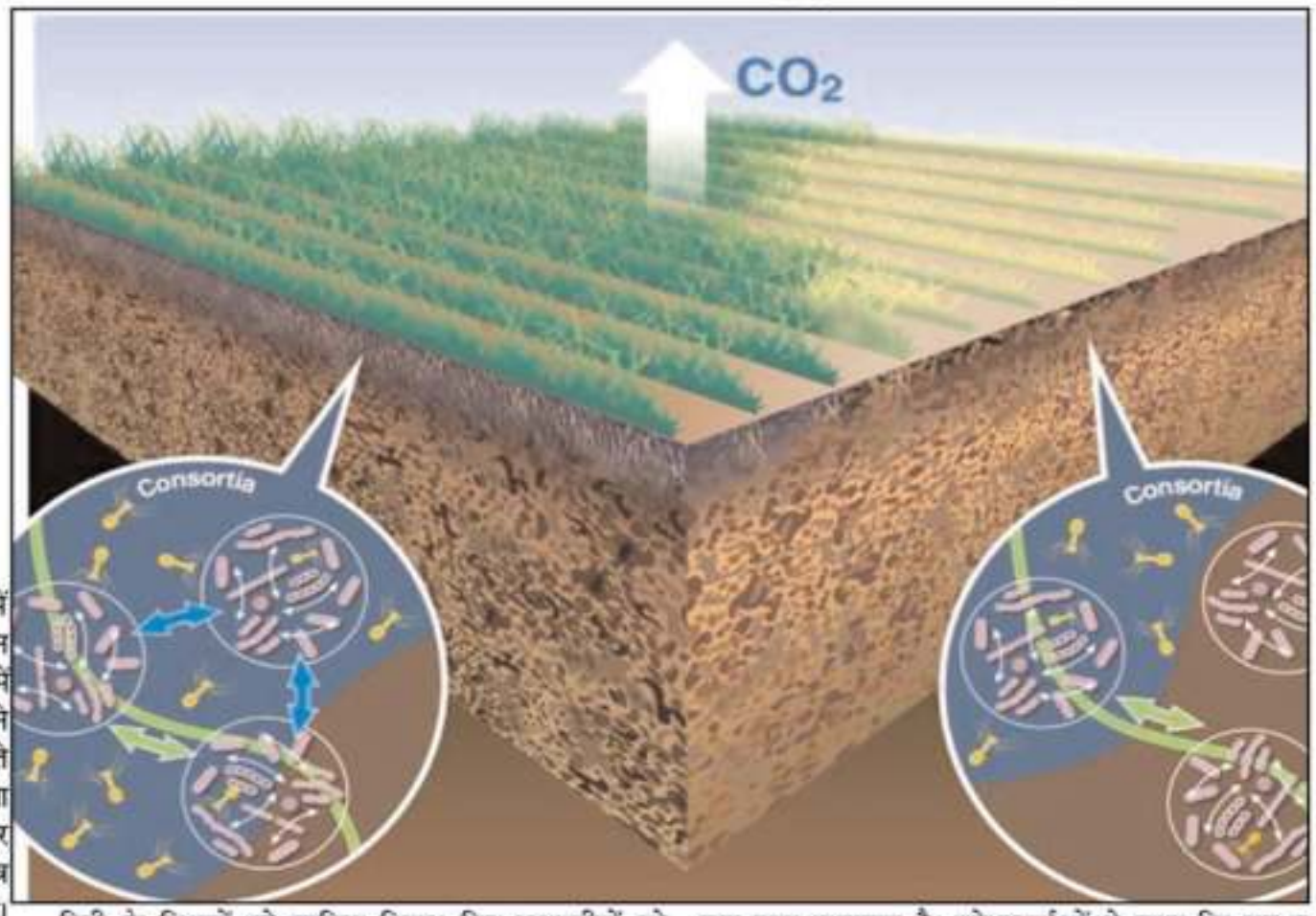

मैसाचुसेट्स एमहर्स्ट विश्वविद्यालय में माइक्रोबायोलॉजी के प्रोफेसर और अध्ययनकर्ता क्रिस्टन डीएंजेलिस कहते हैं सूक्ष्म जीव हर जगह और हर चीज में होते हैं। एक चम्मच मिट्टी में ब्रह्मांड में जाने पहचाने सितारों की तुलना में अरबों गुना अधिक सूक्ष्म जीव होते हैं। फिर भी, हम उनके बारे में इतना नहीं जानते हैं। ऐसा लगता है कि सूक्ष्म जीवों की गतिविधि का वातावरण पर एक बड़ा प्रभाव पड़ता है, विशेष रूप से कैसे सूक्ष्म जीव कार्बनिक कार्बन को परिवर्तित करने में मदद करते हैं। सभी गिरते हुए पत्तों, सड़ते पेड़ के तनों, घास और अन्य कार्बनिक पदार्थ जो उस कार्बन को वातावरण में जाने से रोक देते हैं। यह मिट्टी के कार्बनिक पदार्थ, या एसओएम है, जो न केवल कार्बन सिंक के रूप में कार्य करता है बल्कि मिट्टी द्वारा पानी को अवशोषित करने और बाढ़ को रोकने के साथ-साथ पौधों के जीवन के लिए ऊर्जा का पौष्टिक स्रोत होने की क्षमता भी प्रदान करता है। प्रमुख अध्ययनकर्ता लुइज़ ए. डोमिग्नोज़-होर्टा कहते हैं यह पूरी तरह से स्पष्ट नहीं है कि सूक्ष्मजीव मिट्टी के कार्बनिक पदार्थ, या एसओएम कैसे बनाते हैं। उन्होंने ने कहा हमारा अध्ययन मिट्टी के कार्बनिक पदार्थ, या एसओएम की संरचना को आकार देने के लिए सूक्ष्मजीवों की संरचना और गतिविधि की प्रासंगिकता पर प्रकाश डालता है। डोमिग्नोज़-होर्टा ने कहा हमारे अध्ययन से पहले, कोई नहीं जानता था कि एसओएम के गठन के लिए सूक्ष्मजीवों के समुदायों की विशेष संरचना महत्वपूर्ण है। टीम ने एक प्रयोग किया जिसमें उन्होंने विभिन्न सूक्ष्मजीव समुदायों के साथ ÷मॉडल मिट्टी÷ या रेत और मिट्टी के मिश्रणों को शामिल किया। फिर सूक्ष्मजीवों को शर्करा और विटामिन दिया ताकि वे चार महीने में विकसित हो सकें, ताकि वे पुरे समय एसओएम का निर्माण कर सके। टीम तब इन विभिन्न समुदायों द्वारा उत्पन्न एसओएम को मापने में सफल रही। साथ ही यह परीक्षण इस बात का पता लगाने में सक्षम था कि एसओएम इसे बनाने वाले सूक्ष्मजीवों पर निर्भर करता है। ऐसा करने के लिए, टीम ने ऑक्सीजन की अनुपस्थिति में मिट्टी को 650 डिग्री सेल्सियस तक गर्म किया। जैसे ही मिट्टी को गर्म किया गया, तब मिट्टी ने कार्बन गैस छोड़ना शुरू कर दिया था। एसओएम के अधिक गर्मी के स्थिर नमूने 400 डिग्री सेल्सियस से ऊपर तापमान तक पहुंच गए, जबकि गर्मी के कम स्थिर नमूने 200 से 300 डिग्री सेल्सियस की सीमा में अधिक कार्बन उत्सर्जित करते हुए पाए गए। डोमिग्नोज़-होर्टा ने बताया की यह परख स्विट्जरलैंड में हमारे मिट्टी जैव रसायनविदों के सहयोगियों द्वारा किया गया था और यह विज्ञान को आगे बढ़ाने के लिए एक बहुआयामी शोध टीम के महत्व का एक बड़ा उदाहरण है। शोधकर्ताओं ने पाया कि वह न केवल सूक्ष्म जीवों को एसओएम गठन से जोड़ने के सबूत हैं, बल्कि विभिन्न सूक्ष्म जीवों ने एसओएम की संरचना को अलग-अलग तरीकों से आकार दिया। जिसमें एसओएम की सीओ2 में बदलने की क्षमता शामिल है। हालांकि ऐसा लगता है कि इस मॉडल प्रणाली में एसओएम के निर्माण को चलाने के लिए बैक्टीरिया मुख्य रूप से जिम्मेदार हैं, यह कवक समुदायों की उपस्थिति है जो मिट्टी को गर्म तापमान का सामना करने लायक बनाते हैं। यह अध्ययन आईएसएमई कम्युनिकेशंस में प्रकाशित हुआ है। डीएंजेलिस कहते हैं कि मैं बैक्टीरिया, कवक और सूक्ष्म जीवों की इस अदृश्य दुनिया को हर जगह देखता हूं। अधिकांश सूक्ष्म जीव हमारी मदद करते हैं। हमें अपनी दुनिया के स्वास्थ्य, सुरक्षा और भलाई को सुनिश्चित करने के लिए सूक्ष्म जीवों के बारे में अधिक जानने की आवश्यकता है।

साभार - (डाउन टू अर्थ)

इंदौर की हवा साफ, भोपाल व ग्वालियर में तेजी से बढ़ रहा प्रदूषण

भोपाल प्रदेश के महानगरों में इंदौर को छोड़कर भोपाल, ग्वालियर और जबलपुर में तेजी से वायु प्रदूषण बढ़ रहा है। भोपाल, ग्वालियर व जबलपुर जैसे महानगरों में वायु गुणवत्ता सूचकांक 300 के आंकड़े को पार कर गया है, जो कि वायु प्रदूषण की गंभीर स्थिति को बताता है। इस तरह का प्रदूषण कुछ दिनों पूर्व तक दिल्ली में था। इन तीनों शहरों की तुलना में इंदौर में हवा की सेहत काफी ठीक है। यहां सूचकांक ज्यादातर समय 90 से 150 तक है। सूचकांक की आदर्श स्थिति 50 या उससे नीचे होनी चाहिए। वहीं अनूपपुर, दमोह, उज्जैन, देवास समेत अन्य शहरों की हवा काफी हद तक साफ है। जिन शहरों में तेजी से वायु प्रदूषण बढ़ रहा है, वहां खराब सड़कें मुख्य रूप से जिम्मेदार हैं। सड़कों से धूल उड़ने और वातावरण में फैलने के कारण हवा की सेहत बिगड़ रही है। काफी हद तक वाहनों का धुआं और नमी भी प्रदूषण के लिए जिम्मेदार है। इन तीनों ही महानगरों में लंबे समय तक हवा प्रदूषित रही तो आम नागरिकों की सेहत पर विपरित असर पड़ना तय है। **खराब सड़कें** - भोपाल, ग्वालियर और जबलपुर में सड़कें खराब हैं। इनमें से वाहनों के चलने के साथ ही वातावरण में धूल फैलती है। यह धूल प्रदूषण को बढ़ावा देती है। **धुआं** - पुराने वाहनों से जहरीला धुआं निकलता है। इन तीनों ही शहरों में हजारों की संख्या में पुराने व कंडम वाहन दौड़ रहे हैं, जो अधिक धुआं छोड़ते हैं।**ठंड** - सर्दी के दिनों में वायु प्रदूषण के लिए जिम्मेदार हानिकारक कण आर्द्रता पाकर भारी हो जाते हैं और वातावरण में निचली स्तह पर ही रहते हैं। इसके कारण ये सभी तरह के कण मिलकर वायु की गुणवत्ता को प्रभावित कर देते हैं। गर्मी के दिनों में भी ये वातावरण में होते हैं लेकिन तब गर्मी अधिक होती है इसलिए इनके कण शुष्क होते हैं और हल्के होकर वातावरण में उपर की ओर रहते हैं जिसके कारण निचले वातावरण में प्रदूषण का स्तर इतना नहीं बढ़ पाता है।

स्वामी, मुद्रक, प्रकाशक सोनल मेहता केलिए प्रतीक्षा ग्राफिक्स, 127 देवी अहिल्या मार्ग, इंदौर (म.प्र.) से मुद्रित एवं 209-बी शहनाई रेसीडेंसी-2 कनाड़िया रोड इंदौर (म.प्र.) से प्रकाशित। संपादक: डॉ. सोनल मेहता फोन : 0731-2595008 Mail.sonal12mehta@yahoo.co.in 9755040008